

जनाबाई : भक्ति, श्रम और आत्मानुभूति का स्त्री-काव्य

वारकरी परंपरा में भक्त-भगवान संबंध, स्त्री-अनुभव और आध्यात्मिक स्वायत्तता का सैद्धांतिक पुनर्पाठ

* डॉ. मेधा

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सत्यवती कॉलेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय

शोध सार:- महाराष्ट्र की वारकरी भक्ति-परंपरा में जनाबाई का काव्य स्त्री-अनुभव, घरेलू श्रम, लोकभाषा और आध्यात्मिक अनुभूति के अद्वितीय अंतर्संबंध का प्रतिनिधित्व करता है। तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी के महाराष्ट्र से संबद्ध जनाबाई की ऐतिहासिक जीवनी का बड़ा भाग संत-परंपरा, मौखिक स्मृति और बाद के संकलनों से निर्मित हुआ है; इसलिए उनके जीवन-वृत्त और काव्य-व्यक्तित्व को पढ़ते समय इतिहास, आख्यान और भक्तिपरक स्मृति के बीच अंतर करना आवश्यक है।[1] परंपरा में उन्हें नामदेव के परिवार की दासी के रूप में याद किया गया है, किंतु उनके अभंगों में यही सामाजिक स्थिति एक अत्यंत स्वतंत्र आध्यात्मिक वाणी में रूपांतरित होती है। पांधरीपांडे ने जनाबाई को भारतीय स्त्री-संत परंपरा के भीतर रखकर उनकी धार्मिक और सामाजिक चेतना का अध्ययन किया है।[2] देशमुख ने जनाबाई से संबद्ध चक्की-गीतों की मौखिक परंपरा को भक्ति-अध्ययन का उपेक्षित क्षेत्र मानते हुए उसमें अनुपस्थिति, विस्थापन और स्त्री-अनुभव की केंद्रीयता को रेखांकित किया है।[3]

प्रस्तुत आलेख का केंद्रीय प्रतिपादन यह है कि जनाबाई को केवल 'स्त्री-संत' अथवा आधुनिक अर्थ में 'स्त्रीवादी कवयित्री' के रूप में सीमित करना उनके काव्य की ऐतिहासिक और आध्यात्मिक जटिलता को कम करना होगा। उनकी मौलिकता इस बात में है कि उन्होंने स्त्री के दैनिक श्रम और घरेलू जीवन को आध्यात्मिक अनुभव की वैध भूमि बनाया। चक्की पीसना, कूटना, झाड़ू लगाना और घर सँभालना उनके यहाँ भक्ति से पृथक कर्म नहीं हैं; वे नाम-स्मरण, सेवा और आत्मानुभूति की प्रक्रियाएँ हैं।[4] उनके विट्ठल कभी माता-पिता और सखा हैं, कभी सहकर्मी, और कभी भक्त द्वारा अपने हृदय में 'बंद' कर लिए जाने वाले आत्मीय देवता। इस प्रकार जनाबाई के काव्य में सगुण-निर्गुण, कर्म-भक्ति, देह-आत्मा और लोक-आध्यात्मिकता के बीच कठोर विभाजन समाप्त होता दिखाई देता है।

बीजशब्द : जनाबाई, वारकरी भक्ति, विट्ठल, अभंग, स्त्री-अनुभव, श्रम, नाम-स्मरण, आत्मानुभूति, भक्त-भगवान संबंध

जनाबाई का जीवन : सामाजिक स्थिति से आध्यात्मिक स्वायत्तता तक

जनाबाई का जीवन भारतीय भक्ति-साहित्य में इसलिए विशिष्ट है कि उनकी काव्यात्मक पहचान किसी राजकीय, विद्वत् अथवा संस्थागत प्रतिष्ठा से निर्मित नहीं हुई। वे लोकजीवन से आती हैं और उनके काव्य का बड़ा हिस्सा उसी लोकजीवन की क्रियाओं, संबंधों और श्रम से निर्मित है। परंपरा उन्हें गंगाखेड़ और पंढरपुर से जोड़ती है तथा नामदेव के परिवार से उनके दीर्घ संबंध का उल्लेख करती है। आधुनिक अध्ययनों में उनकी तिथि और जीवन-विवरण को लेकर कुछ भिन्नताएँ मिलती हैं; अतः निश्चित जीवनी की अपेक्षा

उनके काव्य और संत-परंपरा में निर्मित व्यक्तित्व को प्राथमिक पाठ मानना अधिक उपयुक्त है।[5] नामदेव के परिवार में उनका स्थान 'दासी' का था। किंतु 'दासी' उनकी कविता में केवल सामाजिक अधीनता का सूचक नहीं रह जाता है। वह आत्मपरिचय का एक ऐसा बिंदु बन जाता है, जहाँ से जनाबाई भगवान से सीधे संवाद करती हैं। यह विरोधाभास ही उनके काव्य की शक्ति है। सामाजिक रूप से अधीन व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से किसी मध्यस्थ को स्वीकार नहीं करता। यहाँ भक्ति के

इतिहास का एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है - क्या धार्मिक अनुभव के लिए सामाजिक प्रतिष्ठा आवश्यक है? जनाबाई की कविता का उत्तर नकारात्मक है। उनके लिए ईश्वर तक पहुँचने के लिए न संस्कृत-ज्ञान आवश्यक है, न शास्त्रीय पांडित्य और न सामाजिक ऊँचाई। उनका जीवन स्वयं उनकी साधना है। उनकी कविता इस अर्थ में लोकभक्ति की उस व्यापक प्रक्रिया का हिस्सा है, जिसमें आध्यात्मिक अनुभव विशिष्ट धार्मिक संस्थानों से निकलकर लोकभाषा और लोकजीवन में प्रतिष्ठित होता है। महाराष्ट्र की वारकरी परंपरा में विठ्ठल-भक्ति, नाम-स्मरण और संत-संग ने इसी लोकतंत्रीकरण को शक्ति दी।[6] फिर भी जनाबाई को केवल वारकरी परंपरा की अनुयायी मानना पर्याप्त नहीं। वे इस परंपरा को स्त्री के घरेलू अनुभव से पुनर्गठित करती हैं। नामदेव के यहाँ विठ्ठल से संवाद है; जनाबाई के यहाँ वही विठ्ठल चक्की, झाड़ू, आँगन और हृदय तक आ जाते हैं।

वारकरी भक्ति की वैचारिक भूमि और जनाबाई

वारकरी भक्ति को समझने के लिए विठ्ठल की लोकधार्मिक उपस्थिति को समझना आवश्यक है। पंढरपुर का विठ्ठल महाराष्ट्र में केवल किसी संप्रदाय-विशेष के देवता नहीं हैं; उनकी उपासना विभिन्न जातीय और सामाजिक समूहों को जोड़ने वाली व्यापक धार्मिक संस्कृति का हिस्सा रही है। विठ्ठल-केंद्रित भक्ति में नाम-स्मरण, तीर्थयात्रा, संत-संग और व्यक्तिगत प्रेम का विशेष महत्व है।[7] देल्यूरी और बाद में ढेरे के अध्ययनों ने विठ्ठल-परंपरा की बहुस्तरीय संरचना और उसके लोकधार्मिक आधार को समझने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।[8] नामदेव, ज्ञानदेव, चोखामेला, सावता माली, गोरा कुंभार और जनाबाई जैसे संतों की वाणी में भक्ति सामाजिक जीवन के विभिन्न वर्गों को संबोधित करती है। जनाबाई इसी परंपरा में अपनी विशिष्ट आवाज जोड़ती हैं।

भगवद्गीता में कर्म, ज्ञान और भक्ति के बीच जो संबंध निर्मित होता है, वह भारतीय भक्ति-विचार की पृष्ठभूमि समझने में सहायक है।[9] *भागवत पुराण* में भक्ति के विविध रूपों में स्मरण और सेवा का महत्व है।[10] *नारद भक्ति सूत्र* भक्ति को परम प्रेम के रूप में स्थापित करता है।[11]

जनाबाई इन सिद्धांतों की दार्शनिक व्याख्या नहीं करतीं। उनका महत्व इस बात में है कि वे इन धार्मिक अवधारणाओं को जीवन की दिनचर्या बना लेती हैं। नाम-स्मरण उनके लिए श्रम के साथ चलता है। सेवा घरेलू कार्य बन जाती है। समर्पण आत्मीय संबंध में बदल जाता है और ईश्वर कोई दूरस्थ सत्ता नहीं, दैनिक जीवन का सहभागी बन जाता है। इसलिए जनाबाई का काव्य दर्शन का शास्त्रीय प्रतिपादन न होकर दर्शन का लोकजीवन में रूपांतरण है।

श्रम की लय में भक्ति : “दळितां कांडितां”

जनाबाई का भक्ति-दर्शन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण आयाम श्रम और साधना का अभेद है। उनके एक प्रसिद्ध अभंग में चक्की पीसने का कार्य नाम-स्मरण के साथ एकाकार हो जाता है—

दळितां कांडितां । तुज गाईन अनंता ।

न विसंबें क्षणभरी । तुझे नाम गा मुरारी ।

नित्य हाचि कारभार । मुखीं हरि निरंतर ।

मायबाप बंधुबहिणी । तू बा सखा चक्रपाणी ।[12]

(**भावानुवाद** - अनाज पीसते-कूटते हुए भी मैं तुम्हारा ही गान करूँगी, हे अनंता। एक क्षण के लिए भी तुम्हें नहीं भूलूँगी। यही मेरा प्रतिदिन का काम है और मेरे मुख में निरंतर हरि का नाम है। तुम ही मेरे माता-पिता, भाई-बहन और मेरे सखा हो।)

इस अभंग का केंद्र ‘दळितां कांडितां’ है। चक्की की गति और नाम की पुनरावृत्ति एक-दूसरे में विलीन हो जाती हैं। शरीर श्रम कर रहा है, मुख नाम ले रहा है और चेतना विठ्ठल में लगी हुई है। यहाँ श्रम

केवल भक्ति का अवसर नहीं है बल्कि श्रम स्वयं भक्ति की संरचना बन जाता है। देशमुख का अध्ययन इसी बिंदु पर विशेष महत्व रखता है। उन्होंने जनाबाई से संबद्ध चक्की-गीतों को स्त्री-मौखिक भक्ति-परंपरा का महत्वपूर्ण किंतु उपेक्षित क्षेत्र माना है और उनके भीतर अनुपस्थिति, अकेलेपन तथा विस्थापन के अनुभवों को रेखांकित किया है।^[13] पोइतेवाँ और रायकर का *Stonemill and Bhakti* भी चक्की और भक्ति के इस अंतर्संबंध को समझने के लिए उल्लेखनीय है।^[14] यहाँ एक गहरा सैद्धांतिक निष्कर्ष यह निकलता है कि जनाबाई श्रम को केवल आध्यात्मिक अर्थ नहीं देतीं, बल्कि श्रम के सामाजिक मूल्य को आध्यात्मिक गरिमा प्रदान करती हैं। जिस श्रम को सामाजिक व्यवस्था स्त्री का स्वाभाविक और अदृश्य दायित्व मानती है, वही श्रम जनाबाई की कविता में ईश्वर-साक्षात्कार का माध्यम बन जाता है।

“झाडलोट करी जनी” : जब भगवान स्वयं श्रमिक बनते हैं
जनाबाई के काव्य-दर्शन का सबसे क्रांतिकारी पक्ष उस अभंग में दिखाई देता है, जिसमें विठ्ठल स्वयं घरेलू काम करते हैं—

झाडलोट करी जनी । केर भरी चक्रपाणी ।

पाटी घेरुनियां शिरीं । नेऊनियां टाकी दुरी ।

ऐसा भक्तिसी भुलला । नीच कामें करू लागला ।

जनी म्हणे विठोबाला । काय उतराई होऊं तुला ।^[15]

(भावानुवाद- जनी झाड़ू लगाती है और चक्रपाणि स्वयं कूड़ा उठाते हैं। सिर पर टोकरी रखकर वे उसे दूर फेंक आते हैं। भक्त के प्रेम में विठ्ठल इतना डूब गया कि वह वह काम करने लगा जिसे संसार नीच समझता है। जनी कहती है—हे विठोबा, तुम्हारे इस प्रेम का ऋण मैं कैसे चुका सकती हूँ?)

इस अभंग में भक्त-भगवान संबंध की पूरी पारंपरिक संरचना उलट जाती है। भगवान भक्त की सेवा कर रहे हैं। यहाँ ईश्वर सर्वोच्च सत्ता

होकर भी श्रम से ऊपर नहीं रहते। सामाजिक दृष्टि से ‘नीच’ समझे जाने वाले काम को विठ्ठल स्वयं करते हैं। इस प्रकार जनाबाई बिना किसी प्रत्यक्ष सामाजिक घोषणापत्र के श्रम की सामाजिक श्रेणी को उलट देती हैं। यदि भगवान स्वयं कूड़ा उठा सकते हैं, तो कूड़ा उठाने वाला मनुष्य धार्मिक दृष्टि से निम्न कैसे हो सकता है? यहाँ भक्ति एक मूल्यात्मक पुनर्संरचना का कार्य करती है। रूथ वनिता ने जनाबाई और विठ्ठल के संबंध को आत्मीयता और सख्य के संदर्भ में पढ़ते हुए भक्त-भगवान संबंध की इस निकटता पर बल दिया है।^[16] विठ्ठल यहाँ मंदिर की ऊँचाई से उतरकर स्त्री के घर में आते हैं और उसके साथ काम करते हैं। यह दृश्य भारतीय भक्ति के भीतर ईश्वर की एक अत्यंत लोकतांत्रिक कल्पना प्रस्तुत करता है।

‘दासी’ की वाणी और स्त्री की आध्यात्मिक स्वायत्तता

जनाबाई की कविता को स्त्री-अनुभव के संदर्भ में पढ़ना अनिवार्य है, किंतु आधुनिक ‘स्त्रीवाद’ की अवधारणाओं को मध्यकालीन कवयित्री पर बिना ऐतिहासिक सावधानी के आरोपित करना उचित नहीं होगा। जनाबाई आधुनिक राजनीतिक भाषा में पितृसत्ता की आलोचना नहीं करतीं। फिर भी उनकी कविता में स्त्री की स्वतंत्र आध्यात्मिक आवाज अत्यंत स्पष्ट है। उनका अनुभव किसी पुरुष मध्यस्थ पर निर्भर नहीं है। वह स्वयं विठ्ठल को पुकारती हैं और स्वयं उससे शिकायत करती हैं। स्वयं उसे अपना सखा बनाती हैं और स्वयं उसे अपने हृदय में बाँध लेती हैं। इस दृष्टि से ‘दासी’ शब्द का अर्थ अत्यंत जटिल हो जाता है। सामाजिक अर्थ में दासी अधीन है; भक्तिकाव्य में वही दासी भगवान के साथ ऐसा संबंध स्थापित करती है जिसमें सत्ता-संबंध उलट जाते हैं। पांथरीपांडे ने जनाबाई को भारतीय स्त्री-संत परंपरा के भीतर रखकर उनकी विशिष्टता पर विचार किया है।^[17] फेल्डहाउस द्वारा संपादित *Images of*

Women in Maharashtrian Literature and Religion में जनाबाई और कान्होपात्रा पर केंद्रित सेलरग्रेन का अध्ययन भी स्त्री-संत अनुभव की सामाजिक और धार्मिक जटिलताओं को सामने लाता है। [18] जनाबाई के यहाँ स्त्री-अनुभव का महत्त्व इस बात में नहीं है कि वे पुरुष-सत्ता का प्रत्यक्ष निषेध करती हैं; बल्कि इस बात में है कि वह स्त्री के अनुभव को ईश्वर-अनुभव की वैध भाषा बना देती हैं। यह एक गहरा आध्यात्मिक स्वायत्तताबोध है।

“धरिला पंढरीचा चोर” : भक्त द्वारा भगवान का अधिग्रहण
जनाबाई की भक्ति में भक्त और भगवान की दूरी सबसे साहसपूर्ण ढंग से उस प्रसिद्ध अभंग में दृष्टिगत होती है, जिसमें वे विठ्ठल को ‘पंढरी का चोर’ कहकर पकड़ लेती हैं—

धरिला पंढरीचा चोर । गळां बांधोनियां दोर ।

हृदय बंदिखाना केला । आंत विठ्ठल कोंडिला ।

शब्दों केली जवाजुडी । विठ्ठल पायीं घातली बेडी ।

सोहं शब्दाचा मारा केला ।

विठ्ठल काकुलती आला ।

जनी म्हणे बा विठ्ठला । जीवें न सोडीं मी तुला । [19]

(भावानुवाद -मैंने पंढरपुर के उस चोर को पकड़ लिया है और उसके गले में रस्सी बाँध दी है। अपने हृदय को मैंने कारागार बना लिया और उसमें विठ्ठल को बंद कर दिया। शब्दों की बेड़ियाँ बनाकर उसके पैरों में डाल दीं। ‘सोऽहम्’ की अनुभूति से उसे अपने भीतर बाँध लिया। जनी कहती है—हे विठ्ठल, अब मैं अपने प्राण रहते तुम्हें नहीं छोड़ूँगी।) यहाँ भक्ति का संबंध पूरी तरह उलट जाता है। भक्त भगवान की शरण में जाता है—यह सामान्य धार्मिक संरचना है। लेकिन जनाबाई भगवान को पकड़ती हैं। भगवान को

अपने हृदय में बंद कर देती हैं। उन्हें छोड़ने से इनकार करती हैं। इस अभंग की सबसे उल्लेखनीय पंक्ति है—“हृदय बंदिखाना केला।” मंदिर का विठ्ठल अब हृदयरूपी कारागार में कैद विठ्ठल है। बाहरी देवता आंतरिक अनुभूति बन जाता है। ‘सोहं’ की अभिव्यक्ति को किसी व्यवस्थित अद्वैत-दर्शन का प्रत्यक्ष प्रमाण मानना सावधानी के बिना उचित नहीं होगा; किंतु यह अवश्य स्पष्ट है कि जनाबाई के यहाँ भक्त और भगवान के बीच की दूरी अत्यंत सूक्ष्म हो जाती है। [20] उपलब्ध पाठ में यह अभंग *सकलसंतगाथा* में अभंग क्रमांक १८० के रूप में मिलता है। [21] इस काव्यात्मक उलटाव में स्त्री आध्यात्मिक स्वायत्तता का अत्यंत महत्त्वपूर्ण रूप दिखाई देता है : जिसे समाज ने ‘दासी’ कहा, वही अपने हृदय में स्वयं भगवान को बंद कर सकने वाली सत्ता बन जाती है।

सगुण से निर्गुण की ओर : जनाबाई की आत्मानुभूति और समकालीन अर्थ

जनाबाई के काव्य को केवल सगुण विठ्ठल-भक्ति तक सीमित करना उचित नहीं। उनके अनेक पदों में विठ्ठल सर्वव्यापक सत्ता के रूप में उपस्थित हैं। एक अभंग में वे कहती हैं—

वामसव्य दोहींकडे । देखू कृष्णाचें रुपडें ।

आतां खाले पाहू जरी । चहूंकडे दिसे हरी ।

माझें नाठवे मीपण । तेथें कैचें दुजेपण । [22]

(भावानुवाद- दाएँ-बाएँ जहाँ भी देखती हूँ, कृष्ण का ही रूप दिखाई देता है। ऊपर-नीचे, चारों ओर हरि ही दिखाई देते हैं। मेरा ‘मैं’ ही वहाँ नहीं रहता; फिर दूसरा कौन रह सकता है?) यहाँ जनाबाई की भक्ति दृष्टि का रूपांतरण बन जाती है। विठ्ठल अब किसी एक स्थान पर सीमित देवता नहीं हैं। वे सर्वत्र हैं और ‘मीपण’

अर्थात् अहंभाव का लय होना इस अनुभव का केंद्रीय पक्ष है। ज्ञानदेव की परंपरा में ज्ञान और भक्ति के बीच जो अंतःसंबंध मिलता है, जनाबाई के यहाँ वह लोकानुभूति का रूप ग्रहण करता है।[23] वे दार्शनिक तर्क प्रस्तुत नहीं करतीं; उनका अनुभव ही उनका दर्शन बन जाता है। इसी कारण जनाबाई की भक्ति को केवल भावुक या सरल भक्तिभाव कहना अनुचित है। उसमें गहरा **ज्ञानात्मक आयाम** मौजूद है। उनका काव्य बाहरी वस्तुओं को परिवर्तित करने का दावा नहीं करता; वह देखने की प्रक्रिया को ही पैवार्तित कर देता है। यही उनकी आध्यात्मिक आधुनिकता का एक महत्वपूर्ण आधार भी है।

आज जब श्रम और देखभाल के कार्यों को अक्सर आर्थिक और सामाजिक मूल्यांकन में अदृश्य कर दिया जाता है, जनाबाई का काव्य घरेलू श्रम को पुनः दृश्य बनाता है। आज जब आध्यात्मिकता को कभी-कभी सामाजिक जीवन से पलायन के रूप में देखा जाता है, जनाबाई बताती हैं कि आध्यात्मिकता जीवन के सबसे साधारण कार्यों में भी संभव है। उनकी कविता हमें यह भी बताती है कि आध्यात्मिक स्वायत्तता का अर्थ सामाजिक संबंधों से पलायन नहीं, बल्कि उन्हीं संबंधों के भीतर अपने अनुभव को अर्थ देने की क्षमता है।

निष्कर्ष

जनाबाई का काव्य भारतीय भक्ति-परंपरा में स्त्री-अनुभव की एक ऐसी उपस्थिति है जिसे केवल ‘भक्त कवयित्री’ कहकर समाप्त नहीं किया जा सकता। उनका महत्व तीन परस्पर संबद्ध स्तरों पर समझा जा सकता है—**श्रम, संबंध और आत्मानुभूति**। पहले स्तर पर वे घरेलू श्रम को आध्यात्मिक गरिमा देती हैं। “दळितां कांडितां” में चक्की और नाम-स्मरण एक ही लय बन जाते हैं।[24] दूसरे स्तर पर वे भक्त-भगवान संबंध को पुनर्गठित करती हैं। विडुल उनके माता-

पिता, भाई-बहन और सखा हैं; “झाडलोट करी जनी” में वही विडुल उनके साथ श्रम करते हैं।[25] तीसरे स्तर पर वे आत्मानुभूति की ऐसी भूमि निर्मित करती हैं जहाँ भक्त भगवान को अपने हृदय में बंद कर सकता है और अंततः ‘मीपण’ के लय में सर्वत्र उसी सत्ता का अनुभव कर सकता है।[26] इसलिए जनाबाई को आधुनिक अर्थ में सीधे ‘स्त्रीवादी’ घोषित करने के बजाय उन्हें स्त्री-अनुभव के आध्यात्मिकीकरण और आध्यात्मिक अनुभव के लोकजीवीकरण की कवयित्री कहना अधिक प्रासंगिक होगा। उनकी कविता सामाजिक संरचना का घोषणापत्र नहीं लिखतीं, लेकिन वह उस संरचना के भीतर अर्थों को परिवर्तित कर देती हैं। दासी ईश्वर की प्रिय हो जाती है। घरेलू श्रम साधना बन जाता है। झाड़ू भक्ति का उपकरण बन जाती है। चक्की नाम-स्मरण का चक्र बन जाती है और भगवान स्वयं भक्त के घर में आकर उसके साथ काम करते हैं। जनाबाई की सबसे बड़ी काव्यात्मक उपलब्धि यही है कि उन्होंने भक्ति को जीवन का अभिन्न अंग बना लिया, उसे जीवन से अलग नहीं किया। उनके लिए ईश्वर की खोज किसी दूरस्थ आध्यात्मिक प्रदेश की यात्रा नहीं है। वह चक्की के पास, आँगन में, श्रम करते हुए, अकेलेपन में, प्रेम में और अंततः अपने ही हृदय में घटित होती है। इस अर्थ में जनाबाई का काव्य वारकरी भक्ति की केवल एक स्त्री-आवाज नहीं है; वह भारतीय भक्ति-दर्शन में लोक, श्रम, देह और आत्मा के संबंध को पुनर्परिभाषित करने वाली महत्वपूर्ण काव्यात्मक उपस्थिति है।

अंत-टिप्पणियाँ

[1] माधुरी देशमुख, “The Mothers and Daughters of Bhakti: Janābāī in Marathi Literature,” *International Journal of Hindu Studies*, २४, अंक १ (२०२०), पृ. ३३-५९। लेख जनाबाई को

चौदहवीं शताब्दी के महाराष्ट्र से संबद्ध मानते हुए उनके चक्की-गीतों की मौखिक परंपरा को केंद्र में रखता है।

[2] राजेश्वरी वी. पांधरीपांडे, “**Janābāī: A Woman Saint of India**,” अरविंद शर्मा (सं.), *Women Saints in World Religions*, अल्बानी: स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस, २०००, पृ. १४५-१७९।

[3] देशमुख, “**The Mothers and Daughters of Bhakti**,” पृ. ३३-५९।

[4] जनाबाई के काव्य में घरेलू कार्य और विठ्ठल-भक्ति के अंतर्संबंध की चर्चा समकालीन जनाबाई-अध्ययनों में केंद्रीय है।

[5] जनाबाई पर आधुनिक संदर्भ-साहित्य में उनके जीवन-वृत्त को संत-परंपरा और बाद की स्मृतियों के माध्यम से पुनर्निर्मित किया गया है। नित्या पवार का आधुनिक अध्ययन भी जनाबाई को मराठी भाषा की मध्यकालीन संत-कवयित्री और नामदेव की दासी के रूप में प्रस्तुत करता है।

[6] जनाबाई को वारकरी परंपरा के भीतर समझने के लिए विठ्ठल-केंद्रित संत-साहित्य और नामदेव-परंपरा का अध्ययन आवश्यक है। जनाबाई के लगभग ३४० अभंगों की परंपरागत संख्या भी आधुनिक संदर्भ-स्रोतों में मिलती है।

[7] वारकरी परंपरा में विठ्ठल-भक्ति, नाम-स्मरण और विभिन्न सामाजिक समूहों की भागीदारी का व्यापक संदर्भ आधुनिक विठ्ठल-अध्ययनों में मिलता है।

[8] जी. ए. देल्यूरी, *The Cult of Viṭṭhobā*, पुणे, १९६०; आर. सी. डेरे, *Viṭṭhal: Ek Mahāśamanvay*, पुणे, १९८४। देशमुख और ग्लुशकोवा के शोधों की संदर्भ-सूचियों में देल्यूरी का ग्रंथ प्रमाणित रूप से उद्धृत है।

[9] *श्रीमद्भगवद्गीता*, विशेषतः अध्याय ३, ९ और १८।

[10] *श्रीमद्भगवत महापुराण*, सप्तम स्कंध, ५. २३-२४।

[11] *नारद भक्ति सूत्र*, सूत्र २।

[12] जनाबाई, “दळितां कांडितां,” *संत जनाबाईचे अभंग*। इस अभंग की पाठ-परंपरा में चक्की-श्रम, नाम-स्मरण और विठ्ठल के आत्मीय संबंध का समन्वय मिलता है।

[13] देशमुख, “**The Mothers and Daughters of Bhakti**,” पृ. ३३-५९।

[14] गाय पोइतेवाँ और हेमा रायकर, *Stonemill and Bhakti*, १९९६। यह ग्रंथ जनाबाई से संबद्ध चक्की और स्त्री-भक्ति की परंपरा के अध्ययन में उद्धृत होता है।

[15] जनाबाई, “झाडलोटी करी जनी,” *सकलसंतगाथा*, खंड पहला : *संत जनाबाईचे अभंग*। अभंग-पाठ की उपलब्ध प्रति में “केर भरी चक्रपाणी” और “नीच कामें करूं लागला” सहित चार चरण मिलते हैं।

[16] रूथ वनिता, “**God as Sakhi: Medieval Poet Janabai and her Friend Vithabai**,” *Gandhi's Tiger and Sita's Smile*, नई दिल्ली: योदा प्रेस, २००५, पृ. ९१-१०४। जनाबाई और विठ्ठल के आत्मीय संबंध पर केंद्रित यह अध्ययन जनाबाई-विमर्श का महत्वपूर्ण स्रोत है।

[17] पांधरीपांडे, “**Janābāī: A Woman Saint of India**,” पृ. १४५-१७९।

[18] सारा सेलरग्रेन, “**Janabai and Kanhopatra: A Study of Two Women Sants**,” ऐन फेल्डहाउस (सं.), *Images of Women in Maharashtrian Literature and Religion*, अल्बानी: स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस, १९९६, पृ. २१३-२३८।

[19] जनाबाई, “धरिला पंढरीचा चोर,” *सकलसंतगाथा*, अभंग क्रमांक १८०।

[20] यहाँ ‘सोहं’ को व्यवस्थित अद्वैत-दर्शन के प्रमाण के रूप में नहीं, बल्कि भक्त-भगवान की दूरी के लय का काव्यात्मक संकेत माना गया है।

[21] “धरिला पंढरीचा चोर” के पाठ और अभंग क्रमांक १८० की पुष्टि उपलब्ध मराठी पाठ-स्रोतों से की जा सकती है।

[22] जनाबाई, “वामसव्य दोहींकडे,” *संत जनाबाईचे अभंग*।

[23] ज्ञानदेव, *ज्ञानेश्वरी*, विशेषतः अध्याय ९, १२ और १८।

[24] देशमुख, पृ. ३३-५९।

[25] पांधरीपांडे, पृ. १४५-१७९; सेलरग्रेन, पृ. २१३-२३८।

[26] जनाबाई के ‘मीपण’ और सर्वव्यापक विठ्ठल संबंधी काव्य को उनके भक्तिपरक आत्मानुभव के व्यापक संदर्भ में पढ़ना आवश्यक है। आधुनिक शोध भी उनके काव्य में गहरे दार्शनिक बोध की ओर संकेत करता है।

संदर्भ-सूची

प्राथमिक स्रोत

1. जनाबाई। *सकलसंतगाथा, खंड पहला : संत जनाबाईचे अभंग*। संपा. र. रा. गोसावी।
2. ज्ञानदेव। *ज्ञानेश्वरी*।
3. श्रीमद्भगवद्गीता।
4. श्रीमद्भगवत महापुराण।
5. नारद भक्ति सूत्र।

द्वितीयक स्रोत

6. देल्यूरी, जी. ए. *The Cult of Viṭṭhobā*. पुणे, १९६०।

7. देशमुख, माधुरी। “The Mothers and Daughters of Bhakti: Janābāī in Marathi Literature.” *International Journal of Hindu Studies* २४, अंक १ (२०२०): ३३-५९।

8. पांधरीपांडे, राजेश्वरी वी. “Janābāī: A Woman Saint of India.” अरविंद शर्मा (सं.), *Women Saints in World Religions*. अल्बानी: SUNY Press, २०००, पृ. १४५-१७९।

9. फेल्डहाउस, ऐन, सं. *Images of Women in Maharashtrian Literature and Religion*. अल्बानी: SUNY Press, १९९६।

10. सेलरग्रेन, सारा। “Janabai and Kanhopatra: A Study of Two Women Sants.” फेल्डहाउस (सं.), *Images of Women in Maharashtrian Literature and Religion*, पृ. २१३-२३८।

11. वनिता, रूथा। “God as Sakhi: Medieval Poet Janabai and her Friend Vithabai.” *Gandhi’s Tiger and Sita’s Smile*. नई दिल्ली: योदा प्रेस, २००५, पृ. ९१-१०४।

12. पोइतेवाँ, गाय और हेमा रायकर। *Stonemill and Bhakti*. नई दिल्ली, १९९६।

13. नोवेट्जके, क्रिश्चियन ली। *Religion and Public Memory: A Cultural History of Saint Namdev in India*. न्यूयॉर्क: कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस, २००८।

14. ढेरे, आर. सी. *Viṭṭhal: Ek Mahāsamanyay*. पुणे, १९८४।

15. ढेरे, आर. सी. *The Rise of a Folk God: Vittthal of Pandharpur*. अनुवाद: ऐन फेल्डहाउस। २०११।
16. ग्लुशकोवा, इरीना। “Janabai and Gangakhed of Das Ganu: Towards Ethnic Unity and Religious Cohesion in a Time of Transition.” *Indian Economic and Social History Review*, २०२१।
17. पवार, नित्या। “Janabai.” [Springer Reference Work], २०२१। जनाबाई के स्त्री, जाति और मराठी साहित्य में स्थान पर आधुनिक संदर्भ-लेख।
18. पांडे, रेखा। *Divine Sounds from the Heart: Singing Unfettered in Their Own Voices—The Bhakti Movement and its Women Saints (12th to 17th Century)*. कैम्ब्रिज स्कॉलर्स पब्लिशिंग, २०१०।
19. सिन्हा, जयिता। “An Ant Swallowed the Sun”: *Women Mystics in Medieval Maharashtra and Medieval England*. पीएच.डी. शोधप्रबंध, यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास ऐट ऑस्टिन, २०१५।
20. इल्लेकर, सुहासिनी। *संत जनाबाई*. महाराष्ट्र राज्य साहित्य आणि संस्कृती मंडल, २००२।

*Corresponding Author: डॉ. मेधा

E-mail: medha.hindi@satyawatie.du.ac.in

Received: 02 July,2025; Accepted: 22 August,2025. Available online: 28 August, 2025

Published by SAFE. (Society for Academic Facilitation and Extension)

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-Noncommercial 4.0 International License

